55

ISSN 2349-3887

दोआबा

समय से संगत

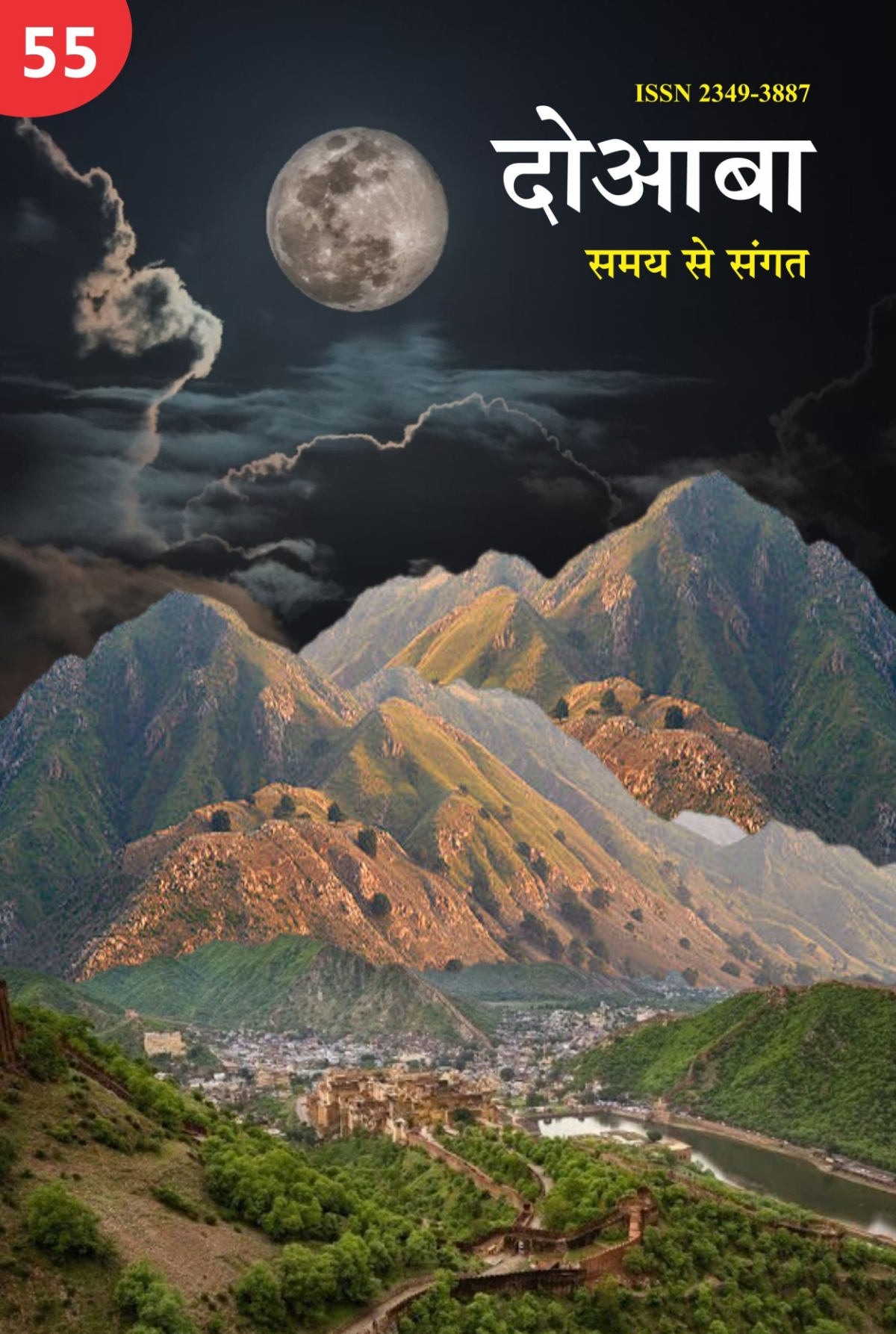

शब्द-मौन

तुम नहीं तोड़ते मौन
क्योंकि
तुम्हें शब्दों
अवसरों
वांछित परिवेश की
कहीं निश्चित प्रतीक्षा है

मैं, तोड़ नहीं पाती मौन
क्योंकि
मुझे इच्छा
अपेक्षा
प्रतीक्षा नहीं है
अनुभूत के प्रखर एकान्त में
अवसर, परिवेश, शब्द का
आग्रह जोड़ने का

जिस मौन से तुम
निकलना चाहते हो
'जिस कुछ' को
समेटने के लिए
उसी मौन में
मैं डूबना चाहती रही
'उसी कुछ' को
सुरक्षित रखने के लिए

– राजी सेठ : 'अग्निगर्भा शब्द' से

जनवरी-मार्च 2026

दोआबा

समय से संगत

दोआबा

समय से संगत

जनवरी-मार्च 2026
वर्ष 20 : अंक 55

***संपादक* : जाबिर हुसेन**
मो.-09431602575

आवरण चित्र : गूगल से साभार
बैक कवर एवं रेखांकन : अनुप्रिया

मानद सहयोग

लता प्रासर, पवन कुमार, जावेद एक़बाल

प्रबंध

मोनिश हुसेन

कार्यालय : सुनील हेम्ब्रम

संपर्क
247 एम आई जी
लोहियानगर, पटना - 800 020
e-mail : doabapatna@gmail.com
मो.-08207535094

सर्वाधिकार सुरक्षित

पाकीज़ा ऑफसेट
शाहगंज, पटना-800 006
मो.-09334116542

मूल्य : ₹ 150/-

रचनाओं में अभिव्यक्त विचार रचनाकारों के अपने हैं।
संपादक का इन विचारों से सहमत होना ज़रूरी नहीं।

जनवरी-मार्च 2026

दोआबा

समय से संगत

अनुक्रम

जाबिर हुसेन : अपनी बात / 05

अरावली विशेष

सुरेंद्र बांसल : खनन की शर-शैय्या पर टिकी अरावली की पुकार / 08
सुरेंद्र बांसल : संज्ञा की बजाय क्रिया के अनुपम / 12
हरिराम मीणा : अरावली पर संकट / 15

स्मृति : राजी सेठ

राजी सेठ : रिल्के – अन्तरालों का अन्वेषक / 24
राजी सेठ : निगम बोध घाट पर / 31

रचना-समय

राजाराम भादू : स्वयं के विरुद्ध / 38
राजेन्द्र उपाध्याय : मैं कविता लिखकर ही मरूंगा / 51
साधना अग्रवाल : मेरी सृजनशीलता का स्थाई आवास तो
आज भी कविता ही है – राजेन्द्र कुमार / 54
मुकुल जोशी : भरे हुए खाली पन्ने / 61
सारिका भूषण : बड़की अम्मा / 76
देव वंश दूबे : बाबूजी / 83
रजनी शर्मा : चंदैनी / गुमराह बाजा / 91
अशोक गुजराती : जिजीविषा / 130
प्रज्ञा पांडेय मनु : हैंड ग्लव्स / कॉरपोरेट / 136

कविता-समय

रुचि भल्ला : नौवीं मंजिल का चांद / 139
लाल्टू : इस दौर में / हताशा / फ़ितरत / 140
प्रीति सिन्हा : थकी-सी किरण / वो लम्हा / सिर्फ थोड़ी देर / 143
पंकज कुमार सिंह : वे लौट रहे हैं / फूल चुनते बच्चे / 147

संवाद

कुमारी उर्वशी : कविता केवल भावनाओं को संभालना नहीं / 150
कांस के फूलों ने कहा जोहार! (प्रज्ञा गुप्ता)

दोआबा-54 (अक्टूबर-दिसम्बर, 2025)

ब्रह्मानन्द ठाकुर : राजनीति को ताकत देता है साहित्य / 157
पूनम सिंह : एक अनिवार्य और प्रतीक्षित पत्रिका है *दोआबा* / 159
हरिराम मीणा : *दोआबा* के माध्यम से निरंतर साहित्य साधना / 160
अनिल विभाकर : साहित्यकारों का निर्वासन / 161
रास बिहारी गौड़ : *दोआबा* एक जरूरी साहित्यिक पत्रिका / 161
निधि अग्रवाल : निर्वासित होती विधाओं को पुनर्स्थापित करता अंक / 162
वीरेन्द्र नारायण झा : *दोआबा* का अपना एक अलग अंदाज / 164
किसलय पंचोली : कहानी जो अच्छी लगी / 166
राजेश कुमार मिश्र : मनुष्यता की पहचान कराती *दोआबा* / 166

□□

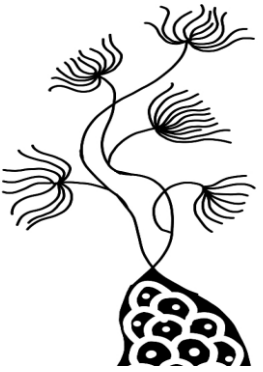

जाबिर हुसेन

कुछ साथियों के छूटने का शोक

कुहासे की मोटी चादर मेरे आंगन के पेड़-पौधों पर फैल रही है। ओस की बूंदें पत्तों पर बर्फ़ीले पानी की तरह जम रही है। आंखों में एक अजीब-सी धुंध समा गई है। मैं काग़ज़ को संभाले अपनी स्मृतियों के कांपते अंश को संभालने की कोशिश कर रहा हूं।

पुराना साल थके क़दमों से पहाड़ की चोटी से अंधी खाई में उतरने को बेचैन है।
मैं इसे रोक भी तो नहीं सकता।

जाते-जाते, इस पुराने साल ने मुझे कई झटके दे दिए हैं। कई साहित्यकार मित्रों ने समय की बेरहमी से हमेशा-हमेशा के लिए अपना रिश्ता तोड़ लिया है। वो अपने पीछे स्मृतियों का भंडार छोड़ गए हैं। वो मेरे कंधों पर इस भंडार को सहेजने-संभालने की जिम्मेदारी डाल गए हैं। सब ने जैसे मेरी स्मृतियों के द्वार इस तरह खोल दिए हैं कि उन्हें काग़ज़ पर उतारना कठिन हो रहा है।

एक सुबह, मेरे साहित्यकार साथी क़ासिम ख़ुर्शीद के गुज़रने की ख़बर आई। वही क़ासिम ख़ुर्शीद, जिन्होंने वर्षों पहले 'विधान परिषद में अक़लियत' नाम से एक तथ्यात्मक पुस्तिका लिखी थी, और मेरे किए गए कार्यों की एक सच्ची तस्वीर आमजन के सामने पेश की थी। अचानक एक हल्के से दिल के झटके में जिंदगी की जंग हार गए।

फिर मेरे रचनाकार दोस्त अवधेश प्रीत कुछ समय तक ज़िंदगी की जंग लड़ते-लड़ते आख़िरकार अपने साथी रचनाकारों को आंसुओं के हवाले कर गए।

तभी दूर दिल्ली से अफ़सोसजनक ख़बर आई कि हमारे समय की वरिष्ठ साहित्यकार मोहतरमा राजी सेठ गुज़र गईं। अपनी पत्रिका *दोआबा* को देश-भर में एक स्वतंत्र, विश्वसनीय और सार्थक पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका दिलाने वाली राजी सेठ!

दोआबा के कई अंकों में उनके साहित्यिक योगदान को भूलना हमारे लिए मुश्किल है। वो हमारी सबसे सम्माननीय रचनाकार रही हैं। आगे के पन्नों में हम उनकी लिखी कुछ इबारतों को स्मृति-स्वरूप पेश कर रहे हैं।

ये कुछ ऐसे यादगार चेहरे रहे, जिन्होंने मेरी रचना-यात्रा को आसान बनाए रखा। उन्होंने समय की बेरहमियों से मुझे बचाने का काम भी किया।

इन रचनाकारों के अलावा, मेरे वर्षों के साथी राजनीति प्रसाद भी इसी बीच, कुछ दिन स्थानीय अस्पताल में इलाजरत रहकर हमें छोड़ गए। उनसे जुड़ी कई यादों का अपना ख़ास महत्व है। वो मेरे साथ ही राज्यसभा के सदस्य बने। उनसे एक विशेष आत्मीय लगाव रहा। दिल्ली रहते-रहते शायद ही कोई सप्ताह गुज़रता हो जब वो हमें अपने आवास पर आमंत्रित नहीं करते। हमारे विचारों में एक ख़ास परस्पर सहयोग का रिश्ता रहा। *दोआबा* का हर अंक वो बड़े चाव और उत्साह के साथ पढ़ते और मुझे अपनी प्रतिक्रिया ज़रूर देते। इस लगाव का एक महत्वपूर्ण बुनियाद हम दोनों की मधु लिमये जी से नज़दीकी भी थी।

ये ऐसे चेहरे थे, जो अब केवल हमारी यादों में ही सुरक्षित रहेंगे।
उन्हें मेरी विनम्र श्रद्धांजलि!

दोआबा का यह अंक

अपने साथी सुरेंद्र बांसल (चंडीगढ़) और वरिष्ठ लेखक हरिराम मीणा (जयपुर) ने अरावली पर्वतमाला को लेकर अपने सूचनापरक आलेखों से इस अंक का मान बढ़ाया है। केंद्र सरकार के हाल के एक फैसले ने देश-भर के पर्यावरण से जुड़े लोगों की चिंता बढ़ा दी है। सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्देश से इस चिंता पर मरहम डालने की कोशिश की है। लेकिन, यह सुप्रीम कोर्ट को भी पता है कि इस वैधानिक मरहम से देश की चिंता कम होने वाली नहीं है। सारी नीतियों का केंद्र थोड़े से पूंजीशाहों की हथेलियों में बंद हैं। अपने आलेखों में इन चिंतक-लेखकों ने दो-टूक ढंग से अपनी बात दर्ज कराई है।

चिंता की बात है कि देश का एक बड़ा हिस्सा अब भी बेहोशी की नींद सो रहा है। इन लेखों से उनकी नींद में कोई ख़लल पड़ेगा, इसकी उम्मीद नहीं। फिर भी *दोआबा* अपने अभियान में पूरी ईमानदारी और समर्पण भाव से लगा है।

देखें, इस अभियान में हमें कितनी कामयाबी हासिल होती है!

अरावली विशेष

राजस्थान में चल रहे व्यापक जनाक्रोश और पर्यावण प्रेमियों की चिंता को देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने स्व-प्रसंज्ञान लेते हुए दिनांक 29 दिसंबर 2025 को सरकार द्वारा घोषित अरावली की नयी परिभाषा पर रोक लगाते हुए प्रभावित चारों राज्यों सहित केंद्र सरकार को नोटिस जारी किये हैं, लेकिन जब तक अरावली की नयी परिभाषा को परिवर्तित कर के सम्पूर्ण अरावली पर्वतमाला को सुरक्षित-संरक्षित करने की ठोस नीति तैयार कर लागू नहीं की जाएगी, तब तक इस समस्या का समाधान संभव नहीं दिखाई दे रहा है।

– हरिराम मीणा

सुरेंद्र बांसल

खनन की शर-शैय्या पर टिकी अरावली की पुकार

अपने यहां यह बात युगांतरों से ज्ञात है कि समस्त जीवन प्रकृति पर ही निर्भर है। हमारे देश का जो भी श्रेष्ठ है, वह नदियों, सरोवरों, पहाड़ों, वनों के सानिध्य से ही आया है। यानी अपने यहां जो कुछ भी जीवनदायी है, वह सब पूजनीय है, और यही भारत की आत्मा का सार है - पूजा की थाली में रखी दूर्वा से लेकर नवग्रहों तक - सब वंदनीय है। इसीलिए युगों से हमारे ऋषि (शिक्षक) और समाजचिंतक निजी और सार्वजनिक जीवन में प्रकृति से सामंजस्य बैठाने का ही चिंतन करते आए हैं।

हमारी अधिकांश परंपराएं, रीति-रिवाज, हमारे संस्कार, हमारा दर्शन, सामाजिक ढांचा आदि सब कुछ प्रकृति की लय में लयबद्ध है। पंच तत्व उसी लयबद्ध दर्शन की निष्पत्ति हैं। दिनचर्या से लेकर ऋतुचर्या तक, भवन-निर्माण से लेकर कृषि पद्धति तक हर व्यवस्था प्रकृति की समझ पर आधारित रही। अपने यहां गांवों और नगरों का निर्माण इस प्रकार किया गया कि जल, वायु और भूमि का संतुलन बना रहे। अपने शहर-कस्बों को हमने प्रकृति से दूर नहीं होने दिया। पेड़-पौधों और वनों-उपवनों की ऐसी व्यवस्था की जाती रही कि हम जहां भी रह रहे हों, वहां प्राकृतिक वातावरण बना रहे। हमने कभी स्वयं को प्रकृति का स्वामी नहीं, उसका अभिन्न अंग माना।

लंबे समय तक भारत की अर्थव्यवस्था कुटीर उद्योगों और स्थानीय संसाधनों पर आधारित रही। इसीलिए हमने गांव-गांव अपने उद्योग-धंधों का विकास इसी तरह किया कि रोज़गार का सृजन भी हो और प्रकृति पर उनका कोई बोझ भी न पड़े। हमने हमेशा यही कोशिश की कि जीवन की रफ़्तार प्रकृति से समरस रहे। इसके लिए छोटे-बड़े सभी उद्योगों को मनुष्य के हस्त-कौशल से जोड़े रखा। ऐसा नहीं होने दिया कि हमारे उद्योग प्राकृतिक साधनों पर बोझ बनते चले जाएं और प्राकृतिक वातावरण को नष्ट करने लगें।

हज़ारों-हज़ार वर्ष तक प्रकृति संग तालमेल की ये मर्यादाएं अक्षुण्ण बनी रहीं। युगों-युगों हम प्रकृति के हर कण को भगवत्ता समझते रहे, लेकिन जैसे-जैसे तथाकथित विकास की अवधारणा हावी होती गई, संतुलन टूटता चला गया। आज हमारी और हमारे नीति नियंताओं की समझ उथली हो चली है। हम सब ग़ैर ज़रूरी और कथित विकास के रोगी बन चुके